

भारतीय सनातन परंपरा में भगवान परशुराम का स्थान अत्यंत विशिष्ट है। वे भगवान विष्णु के छठे अवतार माने जाते हैं और ऐसे एकमात्र चित्रजीवी हैं। भगवान परशुराम का उल्लेख रामायण, महाभारत, भागवत पुराण और कल्कि पुराण



गौरिशंकर वैश्य विनयक
लखनऊ

इत्यादि अनेक ग्रंथों में किया गया है। उनका व्यक्तित्व तप, शौर्य, न्याय और सामाजिक संतुलन का प्रतीक है। उनका जीवन केवल युद्धकथा नहीं, अपितु अन्याय के विरुद्ध संघर्ष, मर्यादा की स्थापना और धर्म

की पुनर्स्थापना का प्रेरक इतिहास है। कहा जाता है कि भारत के अधिकांश ग्राम उन्हीं के द्वारा बसाए गए। वे भार्गव गोत्र की सबसे आज्ञाकारी संतानों में से एक थे। वे सदैव अपने गुरुजन और माता-पिता की आज्ञा का पालन करते थे।

भगवान परशुराम का जन्म महर्षि जमदग्नि और माता रेणुका के घर हुआ। उनका नाम 'राम' था, परंतु हाथ में परशु (कुल्हाड़ी) धारण करने के कारण वे 'परशुराम' कहलाए। उनका जन्म त्रेतायुग में हिंदू कैलेंडर के अनुसार वैशाख माह के शुक्ल पक्ष की तृतीया (अक्षय तृतीया) को माना जाता है, (जो इस वर्ष 19 अप्रैल को है)। बाल्यकाल से ही वे विलक्षण प्रतिभा, कठोर अनुशासन और अद्भुत तेज से युक्त थे। गुरु दत्तात्रेय और महादेव शिव से उन्हें दिव्य अस्त्र-शस्त्रों तथा युद्धविद्या का ज्ञान प्राप्त हुआ। शिव से प्राप्त दिव्य परशु उनके जीवन का प्रमुख प्रतीक बन गया।

श्रीमद्भागवत में दृष्टांत है कि गंधर्वराज चित्ररथ को अस्त्राओं के साथ विहार करते देख, हवन हेतु जल लेने गई रेणुका आसक्त हो गई और कुछ देर वहीं रुक गई। हवन काल व्यतीत हो जाने से क्रुद्ध मुनि जमदग्नि ने अपनी पत्नी के आर्य-मर्यादा विरोधी आचरण करने के दंडस्वरूप पुत्रों को माता रेणुका का वध करने की आज्ञा दी। अन्य सभी भाइयों द्वारा ऐसा दुस्साहस न कर पाने पर पितृभक्त परशुराम ने उनकी आज्ञानुसार माता का वध कर दिया। उन्हें बचाने हेतु आए अपने समस्त भाइयों का भी वध कर दिया। उनके इस कार्य से प्रसन्न होकर पिता जमदग्नि ने जब उनसे वर मांगने के लिए कहा, तो परशुराम ने सभी के पुनर्जीवित होने एवं उनके द्वारा वध किए जाने संबंधी स्मृति नष्ट हो जाने का वर मांगा। परशुराम का काल ऐसा समय था, जब क्षत्रिय वर्ग के कुछ राजा शक्ति, वैभव और सत्ता के मद में अन्याय, अत्याचार और अधर्म की ओर प्रवृत्त हो गए थे। राज्य सत्ता का दुरुपयोग बढ़ने लगा था। राजा कार्तवीर्य अर्जुन (सहस्रार्जुन) का उदाहरण इतिहास में विशेष रूप से मिलता है, जिसने महर्षि जमदग्नि के आश्रम में अत्याचार किया और अंततः उनकी हत्या कर दी। यह घटना परशुराम के जीवन में निर्णायक मोड़ सिद्ध हुई।

पिता की हत्या से व्यथित होकर परशुराम ने प्रतिज्ञा ली कि वे धरती से अधर्मी क्षत्रियों का उन्मूलन करेंगे। उन्होंने इक्कीस बार पृथ्वी को क्षत्रिय विहीन करने का संकल्प पूरा किया। यह कथन केवल रक्तपात का नहीं, अपितु सत्ता के दुरुपयोग के विरुद्ध

धर्म, शौर्य व तप के आदर्श भगवान परशुराम

चेतावनी और सामाजिक संतुलन की पुनर्स्थापना का प्रतीक है। उन्होंने अश्वमेध महायज्ञ किया और सप्तद्वीप युक्त पृथ्वी महर्षि कश्यप को दानकर दी। केवल इतना ही नहीं। उन्होंने देवराज इंद्र के समक्ष अपने शस्त्र त्याग दिए और सागर द्वारा छोड़े गए भूभाग महेन्द्र पर्वत पर आश्रम बनाकर तपस्या में लीन हो गए। भगवान परशुराम का पराक्रम अद्वितीय था। उनका शौर्य केवल बाहुबल तक सीमित नहीं था, अपितु उसमें नैतिक साहस और न्यायबोध निहित था। परशुराम ने यह सिद्ध किया कि शक्ति का प्रयोग तभी सार्थक है, जब वह धर्म के संरक्षण हेतु हो। महाभारत काल में भी परशुराम का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। वे भीष्म पितामह, द्रोणाचार्य और कर्ण जैसे महान योद्धाओं के गुरु रहे। भीष्म के साथ उनका युद्ध परशुराम के अदम्य शौर्य का परिचायक है। यद्यपि यह युद्ध किसी की पराजय के लिए नहीं, अपितु गुरु-शिष्य और धर्म-प्रतिष्ठा की परीक्षा के रूप में देखा जाता है।

परशुराम केवल योद्धा ही नहीं, अपितु महान तपस्वी और समाज सुधारक भी थे। उन्होंने ब्राह्मण और क्षत्रिय दोनों वर्गों को उनके कर्तव्यों का बोध कराया। उनके जीवन से यह संदेश मिलता है कि जन्म से नहीं, कर्म से व्यक्ति की पहचान होती है। केरल की भूमि के निर्माण की कथा भी परशुराम से जुड़ी है। मान्यता है कि उन्होंने समुद्र को पीछे हटाकर नई भूमि का निर्माण किया और वहां धर्म, शिक्षा तथा संस्कृति की स्थापना की। इस कारण केरल में आज

भी परशुराम को 'भूमि के जनक' के रूप में श्रद्धापूर्वक स्मरण किया जाता है। भगवान परशुराम का जीवन आज के युग में भी अत्यंत प्रासंगिक है। वे सिखाते हैं कि अन्याय के विरुद्ध खड़ा होना ही सच्चा धर्म है। साथ ही, उनका तपस्वी स्वरूप यह भी बताता है कि शक्ति के साथ संयम और आत्मसंयम अनिवार्य स्थापित हैं। परशुराम का व्यक्तित्व यह संतुलन करता है कि जब संवाद और शांति विफल हो धर्म की रक्षा हेतु शौर्य आवश्यक हो जाता है, किंतु विजय के पश्चात वैराग्य और तपस्या ही श्रेष्ठ मार्ग है।

भगवान परशुराम भारतीय संस्कृति में धर्म, शौर्य और तप का अनुपम आदर्श हैं। वे ऐसे योद्धा-संत हैं, जिनका जीवन अन्याय के विरुद्ध संघर्ष और आत्मिक उत्थान दोनों का समन्वय प्रस्तुत करता है। उनका इतिहास हमें यह प्रेरणा देता है कि समाज में संतुलन बनाए रखने के लिए साहस, नैतिकता और आत्मसंयम तीनों का समान महत्व है। परशुराम केवल एक पौराणिक चरित्र नहीं, अपितु युगो-युगों तक मार्गदर्शन देने वाला जीवंत आदर्श है।

अक्षय तृतीया : बिना मुहूर्त के शुभ कार्य करने की तिथि

अक्षय तृतीया वैशाख मास की शुक्ल पक्ष की तृतीया तिथि को मनाई जाती है। इस दिन शुभ कार्य को करने के लिए पंचांग और मुहूर्त की आवश्यकता नहीं होती। यह दिन अपने आप में ही एक शुभ दिन माना गया है। इस दिन कोई भी कार्य करना चाहे जैसे - व्यापार, विवाह, गृह प्रवेश, कोई भी नया वाहन खरीदना और सोने-चांदी की वस्तुएं खरीदना इस दिन शुभ माना गया है।

ज्योतिष शास्त्र के अनुसार अक्षय तृतीया के दिन सूर्य और चंद्रमा दोनों ही अपनी उच्च राशि में स्थित होते हैं और शुभ परिणाम देते हैं। इन दोनों ग्रहों की सम्मिलित कृपा का फल अक्षय होता है। अक्षय तृतीया पर मूल्यवान वस्तुओं की खरीदारी और दान-पुण्य के कार्य भी शुभ माने गए हैं। पंचांग के अनुसार, वैशाख मास के शुक्ल पक्ष की द्वितीया तिथि 19 अप्रैल, रविवार के दिन सुबह 10 बजकर 50 मिनट तक व्याप्त रहेगी। इसके उपरांत तृतीया तिथि आरंभ हो जाएगी। 20 अप्रैल, सोमवार के दिन सुबह 7 बजकर 20 मिनट तक तृतीया तिथि रहेगी। उदया तिथि की गणना के अनुसार, 20 अप्रैल को तृतीया तिथि मान्य रहेगी, लेकिन फिर भी अक्षय तृतीया का पर्व 19 अप्रैल, रविवार को मनाना ही शास्त्र सम्मत रहेगा।

अक्षय तृतीया का महत्व

ऐसी मान्यताएं हैं कि अक्षय तृतीया पर सोना-चांदी खरीदने से जातक का भाग्योदय होता है। इसके अलावा, पवित्र नदियों में स्नान, दान, ब्राह्मण भोज, कर्म, यज्ञ और ईश्वर की उपासना जैसे उत्तम कार्य इस तिथि पर अक्षय फलदायी माने गए हैं। धार्मिक मान्यता अनुसार, इस दिन शुरू किया गया कोई भी कार्य आसानी से संपन्न हो जाता है।



क्यों खास है अक्षय तृतीया

अक्षय तृतीया को कई कारणों से साल का सबसे शुभ दिन माना जाता है। पौराणिक मान्यताओं के अनुसार, सतयुग और त्रेतायुग की शुरुआत अक्षय तृतीया से ही हुई थी। भगवान विष्णु ने नर नारायण का अवतार भी इसी दिन लिया था। भगवान परशुराम का जन्म भी अक्षय तृतीया पर हुआ था। इस शुभ तिथि से ही भगवान गणेश जी ने महाभारत का काव्य लिखना शुरू किया था। इतना ही नहीं, अक्षय तृतीया से ही ब्रह्मनाथ के कपाट खुलते हैं और केवल इसी दिन वृंदावन में भगवान बांके-बिहारी जी के चरणों के दर्शन होते हैं। मान्यता है कि इसी दिन विष्णु जी के चरणों से मां गंगा धरती पर अवतरित हुई थीं। वैशाख शुक्ल तृतीया तिथि को अखा तीज के रूप में भी मनाया जाता है। कुछ लोग इसे अक्षय तीज भी कहते हैं। अक्षय तृतीया को वसंत का अंत और ग्रीष्म ऋतु का आरंभ माना जाता है। इसलिए इस दिन जल से भरे घड़े, कुल्हड़, सकोरे, पंखे खड़ाऊं, छाता, तरबूज और ककड़ी आदि गर्मी में लाभकारी वस्तुओं का दान किया जाता है।

अक्षय का अर्थ है, जो कभी क्षय न हो यानी जो सर्वदा अक्षुण्ण रहे। इस दिन किए हुए सभी शुभ कार्य हमेशा के लिए अक्षय हो जाते हैं अर्थात् जो कभी नष्ट न हो। एक कहावत भी है कि जो देता है वही पाता है अर्थात् साफ हृदय और निःस्वार्थ भाव से जो हम दूसरों को देते हैं, वही हमें किसी न किसी रूप में कई गुना होकर पुनः मिलता है, इसलिए शास्त्रों में दान-पुण्य का बड़ा महत्व बताया गया है। अक्षय तृतीया के दिन किया गया दान सर्वश्रेष्ठ दान माना गया है। दान देने से मन में परोपकार की भावना का उदय होता है तथा आसक्ति और लोभ का दमन होता है।

इस दिन ब्रह्म मुहूर्त में उठकर गंगा स्नान करके भगवान विष्णु और माता लक्ष्मी के पूजन की परंपरा है। नैवेद्य में जो का सत्तू, ककड़ी और चने की दाल अर्पित किया जाता है। इस दिन सत्तू खाने तथा नई वस्तु और आभूषण पहनने की परंपरा है। अक्षय तृतीया आशा, समृद्धि और सकारात्मकता का त्योहार है। यह त्योहार हमें याद दिलाता है कि अच्छे कर्म, चाहे वे कितने भी छोटे क्यों न हों, जीवनभर के लिए अशीर्वाद बन सकते हैं। चाहे आप इसे धार्मिक अनुष्ठानों, दान-पुण्य या साधारण प्रार्थना के साथ मनाएं, इसका सार एक ही है। यह इस बात का स्मरण दिलाता है कि समृद्धि केवल धन-दौलत से ही नहीं, बल्कि दया, आस्था और सूशी से भी जुड़ी होती है। शायद यही 'अक्षय' का सच्चा अर्थ है- वह चीज जो कभी समाप्त नहीं होती।

आस्था और उल्लास का महापर्व बैसाखी

प्राचीन काल से भारत एक कृषि प्रधान देश तो है ही, लेकिन साथ-साथ भारत एक उत्सव प्रधान देश भी है। भारत एक विविध संस्कृतियों का देश है, जहां हर ऋतु अपने साथ एक नया उत्साह और उमंग लेकर आती है। भारत में अधिकतर पर्व किसी न किसी फसल की तैयारी के समय मनाए जाते हैं, इसका कारण उत्सव के समय का कालखंड तो होता ही है, साथ में पर्व पर खर्च करने के लिए पर्याप्त मात्रा में संसाधन और धन भी परिवारों के पास उपलब्ध हो जाता है। गेहूं की फसल तैयार होते ही होली का पर्व आ जाता है और खरीफ की तैयारी पर दीपावली पर्व आ जाता है। पंजाब में वैसे तो रबी की फसल जल्दी तैयार हो जाती है, परंतु गेहूं पूरी तरह कटकर चैत्र के अंत तक किसानों के घर पर पहुंच जाता है और उसकी कमाई घर पर आने लगती है। इसी ऋतु के साथ जुड़ा है- पंजाब का प्रमुख पर्व बैसाखी।



अशोक सूरी
आध्यात्मिक लेखक

आशा और नवचेतना की प्रेरणा

बैसाखी के अतिरिक्त भारतीय इतिहास में यह 13 अप्रैल का दिवस कुछ अन्य घटनाओं के लिए भी विशेष है। इसी दिन गौतम बुद्ध को निर्वाण प्राप्त हुआ था। इसी दिन स्वामी दयानंद सरस्वती ने आर्य समाज की स्थापना की थी। बैसाखी का पर्व हमें अपने कर्तव्यों के प्रति निष्ठावान रहना सिखाता है और साथ ही एकता, भाईचारे और मानवता का संदेश देता है। गुरु के लंगर में कोई छोटा या बड़ा नहीं होता सभी एक ही पंक्ति में गुरु का प्रसाद छकते हैं। आज के समय में जब समाज कई चुनौतियों का सामना कर रहा है। बैसाखी का पर्व हमें सकारात्मकता, आशा और नवचेतना की प्रेरणा देता है।

वाहे गुरु जी का खालसा वाहे गुरु जी की फतह

वाहे गुरु जी का खालसा वाहे गुरु जी की फतह इस वाक्य का तात्पर्य है कि यह खालसा पंथ वाहे गुरु जी का है, अतः इसकी सदैव विजय निश्चित है। गुरु जी ने सभी खालसा अनुयायियों को एक विशेष पहचान दी, जिसे पांच ककार (कड़ा, किरपान, कछैरा, कंधा और केष) कहा गया। आज भी सिख पंथ के लोग गुरु जी के इन पांच आदेश को धारण करते हैं। गुरु जी ने सभी सिखों को सिंह बताया और अपने नाम के आगे सिंह लगाने तथा महिलाओं को कौर लगाने का आदेश दिया। यही आदेश पंथ में समानता और समरसता का प्रतीक बना। आज सिखों के उत्सवों के अवसर पर निकलने वाले नगर कीर्तन में पंज प्यारे केसरिया बाना पहने सबसे आगे चलते हैं। आज हर गुरुद्वारे में कीर्तन, अरदास और लंगर का आयोजन नियमित रूप से होता है। पंजाब की लोक संस्कृति इस दिन अपने चरम पर होती है। ढोल की थाप पर झूमते युवक-युवतियां रंग-बिरंगे वस्त्रों और उत्साह से भरा वातावरण हर किसी को अपनी ओर आकर्षित करता है।

इसी के साथ 'राज करेगा खालसा' का अमर संदेश दिया। इसी दिवस को दशमेश पिता गुरु गोबिंद सिंह जी ने खालसा पंथ की स्थापना की। आज का सिख समुदाय इसी खालसा पंथ का विस्तृत रूप है। गुरु जी ने पंज प्यारों को अमृत छकाकर पंज प्यारों की पदवी और अमर सूत्र दिया। गुरु गोबिंद सिंह जी ने इस अवसर पर स्वयं भी पंज प्यारों से अमृत छककर यह सिद्ध किया कि गुरु और चले में कोई अंतर नहीं है। उन्होंने कहा था- 'आपे गुरु चेला' अर्थात् वह स्वयं गुरु भी हैं और स्वयं चेला भी। गुरु गोबिंद सिंह जी पंथ के दसवें एवं अंतिम मानव शरीर धारी गुरु थे। इसक पश्चात् गुरु ग्रंथ साहब को ही गुरु की पदवी पर रखा गया।

पौराणिक कथा

देवयानी और कच

कच और देवयानी का कथानक अत्यंत प्रसिद्ध है। कच देवगुरु बृहस्पति के पुत्र थे। देवताओं के अनुरोध पर वे दैत्यों के गुरु शुक्राचार्य के पास संजीवनी विद्या सीखने गए। देवयानी, शुक्राचार्य की पुत्री, कच से प्रेम करने लगी। कच भी आचार्य और उनकी पुत्री की नित्य सेवा करते, गायन-वादन द्वारा देवयानी को प्रसन्न रखते थे। जब कच का अध्ययन पूर्ण हुआ और शुक्राचार्य ने उन्हें देवलोक जाने की आज्ञा दी, तब देवयानी ने अपने प्रेम का निवेदन करते हुए उनसे विवाह का आग्रह किया। कच ने उत्तर दिया कि गुरु की पुत्री होने के कारण वह उनके लिए पूजनीय बहन के समान है, अतः यह संबंध धर्म के विरुद्ध है। देवयानी ने तर्क दिया कि कच उसके पिता के नहीं, गुरु के पुत्र हैं, इसलिए भाई नहीं लगते। फिर भी कच ने धर्म का पालन करते हुए प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया। इससे क्रोधित होकर देवयानी ने कहा कि उसने कच को बार-बार मृत्यु से बचाया है, इसलिए वह उसके प्रणों पर अधिकार रखती है। उसने शाप दिया कि कच को सीखी हुई विद्या निष्फल हो जाए। कच ने शांत भाव से उत्तर दिया कि वह धर्म नहीं त्याग सकता और शाप स्वीकार करता है, पर प्रत्युत्तर में उसने भी शाप दिया कि देवयानी का यह प्रेम विवाह में सफल नहीं होगा। कच को मारने के लिए असुरों ने अनेक बार प्रयास किए। हर बार शुक्राचार्य की संजीवनी विद्या और देवयानी के आग्रह से वह



शिवानंद मिश्रा
आध्यात्मिक लेखक



जीवित हो उठता। अंततः असुरों ने कच को मारकर उसका भस्म शुक्राचार्य को खिला दिया। तब कच को जीवित करने का एकमात्र उपाय था स्वयं शुक्राचार्य का जीवन त्यागना। परिस्थिति को समझकर शुक्राचार्य ने पहले कच को अपने भीतर से जीवित किया और उसे संजीवनी विद्या सिखाई। फिर कच ने उनका उदर फाड़कर बाहर आकर उसी विद्या से उन्हें पुनः जीवित कर दिया। इसके बाद शुक्राचार्य ने कच को शाप दिया कि वह इस विद्या का स्वयं प्रयोग नहीं कर सकेगा। कच ने उत्तर दिया कि वह इसे दूसरों को सिखा देगा। अंततः कच गुरु की आज्ञा लेकर देवलोक लौट गया और अपनी विद्या से देवताओं का उद्देश्य पूर्ण किया।

बोध कथा सबसे बड़ा धन आत्मविश्वास

एक बार की बात है, एक बहुत ही प्रसिद्ध चित्रकार चौराहे पर खड़े होकर लोगों को अपनी कला दिखा रहा था। तभी वहां एक फटे-पुराने कपड़ों में एक भिखारी आया। भिखारी ने चित्रकार से कुछ खाने के लिए पैसे मांगे। चित्रकार के पास उस समय पैसे नहीं थे, लेकिन उसने अपनी जेब से एक सफेद लिफाफा निकाला और भिखारी को दे दिया। उसने कहा, "मेरे दोस्त, अभी मेरे पास धन नहीं है, लेकिन इस लिफाफे को संभालकर रखना। जब तुम्हें लगे कि तुम्हारे पास खाने को कुछ नहीं बचा, तब इसे खोलना।" भिखारी को बहुत गुस्सा आया। उसने सोचा, "इस कागज के टुकड़े से मेरा पेट कैसे भरेगा?" उसने लिफाफे को अपनी झोली में डाल लिया और उसे भूल गया। कुछ साल बीत गए। एक भीषण सर्दी की रात में भिखारी भूख और ठंड से बेहाल एक पुरानी इमारत के नीचे बैठा था। उसे लगा कि आज उसकी आखिरी रात है। अचानक उसे अपनी फटी हुई झोली में वह पुराना, मुड़ा-तुड़ा लिफाफा मिला। उसे चित्रकार की बात याद आई। जैसे ही उसने लिफाफा खोला, उसके अंदर से कोई कीमती सिक्का या नोट नहीं निकला, बल्कि एक छोटा सा दर्पण (शीशा) और एक कागज का टुकड़ा निकला जिस पर लिखा था, "दुनिया तुम्हें वह देख रही है, जो तुम बाहर से दिख रहे हो, लेकिन तुम वही बनोगे जो तुम इस आईने में देखोगे।"

भिखारी ने कांपते हाथों से उस आईने में अपना चेहरा देखा। सालों से उसने खुद को नहीं देखा था। उसने देखा कि उसकी आंखों में अभी भी एक चमक है, उसके हाथों में काम करने की शक्ति है। उसे अहसास हुआ कि उसने खुद को 'भिखारी' मान लिया था, इसलिए दुनिया उसे भिखारी देख रही थी। अगली सुबह, उसने भीख मांगने के बजाय पास के एक ढाबे पर जाकर बर्तन धोने का काम मांगा। उसने



अपनी सफाई पर ध्यान दिया, मेहनत की और धीरे-धीरे एक छोटा सा काम शुरू किया।

सालों बाद, वह व्यक्ति खुद एक सफल व्यापारी बना। एक दिन वह उसी पुराने चित्रकार से मिला (जो अब काफी बृद्ध हो चुका था)। उसने चित्रकार को धन्यवाद देते हुए कहा, "उस खाली लिफाफे ने मुझे वह दिया जो सोने की मोहरें भी नहीं दे पातीं उसने मुझे 'मैं' से मिलवाया।" कहानी की सीख- हमारी परिस्थिति वैसी ही बनी रहती है, जैसा हम खुद के बारे में सोचते हैं। जब आप खुद का सम्मान करना शुरू करते हैं, तो दुनिया का आपके प्रति नजरिया अपने आप बदल जाता है। आत्मविश्वास ही सबसे बड़ा धन है।